अथ चतुर्थोऽध्यायः

ज्ञानकर्मसंन्यासयोग

(दिव्यज्ञान)

श्रीभगवानुवाच।
इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्।।१।।

श्रीभगवान् उवाच=श्रीभगवान् ने कहा; **इमम्**=इस; **विवस्वते**=सूर्यदेव को; **योगम्**=श्रीभगवान् से जीवात्मा के सम्बन्ध की विद्या का; **प्रोक्तवान्**=उपदेश किया था; **अहम्**=मैंने; **अव्ययम्**=अविनाशी; **विवस्वान्**=विवस्वान् (सूर्य) ने; **मनवे**=मानव-जाति के जन्मदाता वैवस्वत मनु से; **प्राह**=कहा; **मनुः**=मनु ने; **इक्ष्वाकवे**=राजा इक्ष्वाकु के प्रति; **अब्रवीत्**=कहा।

अनुवाद

भगवान् ने कहा, मैंने इस अविनाशी योग का सूर्यदेव विवस्वान् को उपदेश किया था। विवस्वान् ने इसकी शिक्षा मानव जाति के जन्मदाता मनु को दी तथा मनु ने इक्ष्वाकु के प्रति कहा।।१।।

तात्पर्य

इस श्लोक में हमें भगवद्गीता का इतिहास प्राप्त होता है, जो उस चिरन्तन काल से अनुरेखित किया गया है जब वह सम्पूर्ण लोकों के राजाओं को प्रदान की गई थी। यह विज्ञान विशेष रूप से प्रजाजनों की रक्षा के लिए प्रयोजित है। इसलिए